हिन्दी विभाग

स्नातक द्वितीय (II)

पत्र संख्या – 03

* प्रगतिवाद *

प्रगतिवाद का उदय छायावादोत्तर हिन्दी साहित्य में मार्क्सवादी चिन्तन से अनुप्राणित साहित्यिक आन्दोलन के रूप में हुआ है। प्रगतिवाद वस्तुतः साहित्य का काल-चेतना की वस्तुवाद की कठोर विषम था, यथार्थ धरातल पर खींच ले आने का प्रयास है। शोषित पीड़ित आम आदमी प्रगतिवाद रचना के केन्द्र में है। सामंतवादी या बुर्जुआ मूल्यों से उसका स्वाभाविक विरोध है और वह वर्गहीन शोषण मुक्त समाज का द्रष्टा है। सौन्दर्य एवं कला से उसका विरोध नहीं किन्तु प्रधानतः वह जनता के दैन्य और दारिद्र्य से उन भौतिक अभावों को दूर करना चाहता है जो उसकी सौन्दर्य्या-भुभूति में बाधा डालते हैं।

युगीन परिस्थितियों के अतिरिक्त प्रगतिवाद काव्य धारा के उदय में छायावाद की अतिशय व्यक्तिवादिता एवं कल्पना जीविता का भी हाथ है।

व्यक्तिगत अनुभूति और चेतना ही छायावाद के केन्द्र में थे। यथार्थ से पलायन की इस प्रवृत्ति को प्रबुद्ध एवं संवेदनशील प्रगतिवादी कवियों ने समाज के लिए अहितकर एवं अवांछनीय माना और काव्य चेतना को सामाजिक यथार्थ की अभि. व्यक्ति से जोड़ा और वर्गहीन एवं शोषण मुक्त समाज के आदर्श की ओर इसे उन्मुख किया।

प्रगतिशील साहित्य के लक्ष्य की व्याख्या करते हुए प्रेमचंद ने कहा कि "साहित्यकारों और कवियों को मानव जीवन के प्रति आस्था उत्पन्न करने आम आदमी से संबंधित साहित्य की रचना करनी चाहिए।" इस दृष्टिकोण से प्रेरित होकर छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पंत और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' प्रगतिवादी रचनाएँ लेकर प्रस्तुत हुए और हिन्दी कविता में एक नये युग के सूत्रधार बने।

प्रगतिवादी विचारधारा • मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद तथा वर्ग संघर्ष में विश्वास रखती है। इसका प्रमुख केन्द्र मजदूर और उसके माध्यम से

समस्त मानवता का हित चिंतन है। प्रगतिवाद में व्यक्ति के स्थान पर समष्टि को महत्वपूर्ण माना गया है। रोमांटिसिज्म व्यक्तिवाद आदि का वह विरोध करता है और मानव जीवन के विकास की बुद्धि संगत व्याख्या प्रस्तुत करता है। उसकी नीतियां साम्यवादी है क्रांति, दुर्भिक्ष, किसान, मजदूर, हंसिया, हथौड़ा, लेनिन, रूस, लाल झंडा इत्यादि प्रगतिवादी कविता केन्द्र में है। उसमें हृदय पक्ष की उपेक्षा बुद्धि पक्ष की प्रधानता है। रोटी और सेक्स के प्रारंभिक महत्व को वह स्वीकार करता है।

मैं सर्व बनाता द्रोह भरे यौवन का
मैं वाहता नग्न माता उच्छृंखल।

सृष्टि का हेतु भौतिक है तथा मानव जीवन एवं इतिहास का मूल आर्थिक है ऐसा प्रगतिवादियों का दृढ़ विश्वास है। अंधविश्वासों, रूढ़ियों, मिथ्या परम्पराओं पर प्रहार कर वह मानवता की प्रतिष्ठा का आकांक्षी है। ईश्वर और धर्म का वह मजाक उड़ाता है। ईश्वर के सत्ता के प्रति अविश्वास बढ़ जाता है जब वह अपने सामने भूखे, नंगो को

समूह देखता है।

श्वानों को मिलता दूध वस्त्र भूखे बालक अकुलाते हैं
माँ की हड्डी से चिपक-ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं

सार रूप में अपनी सीमाओं के बावजूद प्रगतिवाद ने हिन्दी कविता के विकास में एक महत्वपूर्ण अध्याय में जोड़ा। इसने कविता को व्यक्तिवाद के बन्द कमरे से निकाल कर जन-जीवन के बीच प्रवाहित किया। जीवन और साहित्य के मूल्य, सौन्दर्य बोध और लक्ष्य की सामाजिक यथार्थ एवं उसकी अभिव्यक्ति से जोड़ा, भाषा को कुहरे से निकाल सहज धरातल पर प्रतिष्ठित किया।

प्रस्तुतकर्ता
बेनाम कुमार (अतिथि शिक्षक)
हिन्दी विभाग
राज नारायण महाविद्यालय
हाजीपुर
मो० नं० - 829227104।